नागार्जुन के उपन्यासों में स्वातंत्र्योत्तर ग्रामीण जीवन का यथार्थवादी चित्रण

चंदा कुमारी
शोधार्थिनी
हिन्दी विभाग
जिवाजी विश्वविद्यालय
ग्वालियर, मध्य प्रदेश, भारत

सारांश

ये कथायें ग्रामीण परिपेक्ष को ध्यान में रखते हुये लिखी गई है, चारों तरफ अंधेरा ही अंधेरा है। आदमी स्वतंत्र नहीं है। आज भी भारतीय समाज आर्थिक समस्या से जूझ रहा है। आज भी ग्रामीण आदमी किसी के बाग से कच्चा आम तोड़कर खाता है तो उसको अपनी जान की बाजी लगानी पड़ती है। ये कथायें यथार्थ प्रवृति पर प्रकाश डालती है। यथार्थ के धरातल पर उपन्यासकार अपने उपन्यासों में मानव समाज के क्रमिक विकास एवं वास्तविक का जीवन्त चित्रण करता है। इसके फलश्रुत वह अपने उपन्यासों में सामाजिक जीवन का प्रयोजन साधित करता है। मनुष्य के हृदय में प्रवेश करके समजातीय जीवनानुभूतियों का उत्पादन करना उसका मुख्य ध्येय होता है। वह सामाजिक व्यभिचार के प्रतिवाद के साहित्य

शिल्प का व्यवहार करता है और मनुष्य के रक्तस्पन्दित हृदय के स्पर्श से उसका सौन्दर्य विकसित होता है। उपन्यास मानव जीवन के यथार्थ जीवन बोध को विराट फलक पर प्रस्तुत करता है। मनुष्य के यथार्थ जीवन चित्र के निर्माण के कारण ही आज वह आधुनिक साहित्य की सशक्त गद्य विधा के रूप में प्रतिष्ठत हो सका है। समाज की यथार्थ स्थिति को धारण करके उपन्यास कला प्राणवन्त हो उठी है।

प्रमुख बिन्दु : स्वातंत्र्योत्तर एवं ग्रामीण जीवन का यथार्थ चित्रण।

प्रस्तावना

रूढ़ियों एवं अंधविश्वासो का खण्डन करते हुये यर्थाथवादी विचारों का प्रचार–प्रसार कर समाज सुधार करना नागार्जुन का लक्ष्य है। यथार्थवादी उपन्यासवकारों में नागार्जुन का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। उन्होने पिछड़े, अंधविश्वासी लोगों को जागरूक करने का संकल्प किया है। यथार्थवादी साहित्य–रचना धरातल पर धरातल के लिए होती है। वह न तो वायुवी होती है और न ही उसमें आकाश–कुसुम खिलाये जाते है। उसमें स्वर्णिम स्वप्न के लिए कोई स्थान नहीं होता यथार्थवादी साहित्यकर्मी संसार के कलुष–कालिमा पर भव्य आवरण नहीं डालता। वह कल्पना के स्वप्न लोक में विचरण नहीं करता। वह तो अपने वर्तमान कालीन समाज की वास्तविकता का सफल चित्रकार होता है। उपन्यास साहित्य में यथार्थवादी चिंतन का चित्रण बड़ी कुशलता से हुआ है।

नीत्से के अनुसार

''कोई भी साहित्यकार यथार्थ को बर्दाश्त नहीं कर सकता।'' साहित्यकार अपने जीवन की गहन अनुभूतियों को साहित्य में परि–प्रकाशित करता है। वह मानव जीवन के अनेक पहलुओं को दो तरह से चित्रित करता है। पहले में वह संसार को जैसा देखता है। अर्थात् यथार्थ रूप से वास्तविकता को परि–प्रकाशित करता है। एवं दूसरे में अपने आस–पास परिवेश को मनोनुकूल बनाने के लिए अपनी कल्पना, आदर्श, धारणाओं का प्रयोग करते हुए उन्ही के आधार पर चित्रित करता है। पहले की अभिव्यक्ति यथार्थवाद है तो दूसरा आदर्शवाद 'रियलिस्टिक लिटरेरी' का सूत्रपात सबसे पहले यूरोपीय देशों मे हुआ था। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में पाश्चात्य देशों में धरती पर इसका अभ्युदय हुआ। वेस्टर्न लिटरेचर के डिकेन्स, वॉल्जॉक, फ्लोवेयर जोला आदि ने अपने समय के समाज राजनैतिक अर्थव्यवस्था तथा समूचे परिवेश को बड़ी ईमानदारी के साथ मूर्तरूप दिया। उनकी साहित्यक कृतियाँ उनके युग की सामाजिक व्यवस्था का कठोर प्रहार करने लगी। उन्होने तत्कालीन समाज की यथार्थ स्थितियों का सफल चित्रण करके साहित्य में रियलिस्टिक थॉट दर्ज कराया और इस परम्परा को गतिशील बनाया यथार्थ वादी समाज की समस्त अच्छाइयों के साथ–साथ बुराइयों को भी यथार्थ ढंग से चित्रित करता है। साहित्यकार अपनी युगीन संवेदनाओं को बिना काल्पनिकता के अभिव्यक्त करता है। ''यथार्थवादी साहित्यकार उसे कहा गया है, जो मानव जीवन और समाज का सम्पूर्ण वास्तविक जगत से लेता है और अपने चित्रण में भावुकता को बाधक नहीं होने देता।''

उपन्यास की यथार्थवादी प्रवृत्ति पर प्रकाश डालते हुए डॉ. रामदरश मिश्र ने लिखा है, ''कविता का जन्म एक अनिवार्य आदर्शवादिता को लेकर हुआ था, किन्तु उपन्यास का जन्म आधुनिक काल के यथार्थवादी परिवेश में हुआ है। उपन्यास पूँजीवादी की देन है। पूँजीवादी सभ्यता के विविध जीवन सत्यों को कथा के माध्यम से व्यक्त करने के लिये इसकी उत्पत्ति हुई है। यह मात्र कहानी नहीं है। कहानी यानी कथा तो इसका माध्यम मात्र है, मूल वस्तु है वर्तमान जीवन की जटिल यथार्थवादिता।''

यथार्थवाद का सामान्य का अर्थ है जीवन तथा जगत में जो कुछ हुआ है अथवा युगों से होता आया है साहित्य में उसका वर्णन अथवा अभिव्यक्ति को ही यथार्थवाद कहा जाता है। नागार्जुन समाजवादी चेतन के साहित्यकार है। इन्होने अपने उपन्यासों में यथार्थवादी चित्रणों को ही प्रमुखता दी है। इन्होने मिथिलांचल के लोक जीवन, वहाँ के वातावरण घटनाओं और प्रसंगों को यथार्थ रूप में चित्रित किया है। अपने उपन्यासों में यथार्थ को चित्रित करने के लिए उन्होने वर्णनात्मक शैली को अपनाया है वर्णनात्मक शैली की भाषा का सार्थक रूप घटनाओं, प्रसंगों और वातावरण की यथार्थमयी प्रस्तुति सार्थक सिद्ध हुई है।

स्वतंत्रता–पूर्व भारतीय ग्रामीण समाज आर्थिक दुरावस्था की चरम सीमा में पहुँचा हुआ था। ग्रामीण गरीब जनता गरीबी रेखा के नीचे जिन्दगी बसर करती हुई अनेक दुखों–कष्टों से जूझ रही थी। जमीदारी प्रथा की दहशत के शिकार गरीब श्रमिक–किसान लोग अत्यन्त दयनीय जीवन व्यतीत कर रहे थे। दिन–रात की कमर तोड़

मेहनत से भी उन्हे पेट भर खाना नसीब नहीं हो रहा था। सामन्ती सभ्यता के चंगुल में फँसकर गरीब जनता पशुतुल्य जिन्दगी जीने के लिए मजबूर हो रही रही थी। जमींदार–जागीरदार लोग गरीबों का खून चूस कर अपनी वैभव समृद्धि में जुटे हुए थे। सामन्ती सभ्यता के षडयन्त्र का शिकार होकर किसान वर्ग त्रस्त हो रहा था।

'बलचनमा' में जमीदारी प्रथा की दशहत तले दबी हुई गरीब जनता की यथार्थ स्थिति मुखर हो उठी है। बलचनमा नामक एक गरीब लड़के के माध्यम से पूरे अंचल की आर्थिक दुरावस्था चित्रित हुई है। उसके पिताजी की मौत हो जाने से महज चौदह साल की उम्र में उसे छोटे मालिक के पास नौकर के तौर पर काम करना पड़ता है। काम के बदले मे जूठा भोजन सड़ा हुआ आम, खट्टा दही खाने को मिलता है। उसका पूरा परिवार यहाँ तक कि उसका सात पुरखा, जमीदारों तथा मालिकों का जूंठन खाकर फेरन–फारन करता आ रहा है। बलचनमा अपनी यथार्थ स्थिति का वर्णन करता हुआ कहता है, ''दही जब ज्यादा खट्टा हो जाता था उससे बदबू आने लगती थी और वह अपने या किसी पड़ोसी के खांने लायक नहीं रह जाता जब मुझे मिलता। मैं उस दही को कुत्ते की भाँति खा लेता याद आता है कि एक बार खट्टा और दुर्गन्ध रहने पर उस दही को नहीं खा पाया तो मालिकाईन ने सजा दी थी, अगले दिन खाना नहीं मिला था।''

नई पौध में यह उदाहरण यथार्थ का सार्थक रूप स्पष्ट करता है जब किसी अबोध बालिका को किसी पिता की उम्र के पुरूष के साथ न चाहकर भी विवाह करने को बाध्य किया जाता हो तो

उस समय बिसेसरी की मन स्थिति का यथार्थ वर्णन इस प्रकार किया गया है कि कुएँ में जाकर कुद पड़े बीच आँगन में खड़ी होकर चिल्ला पड़े इससे अच्छा यही होना कि भगवती दुर्गा की पीड़ी पर मेरी बली चढ़ा दो...''

इसी प्रकार यथार्थ रूप का चित्रण किया। जैसे– बाबा बटेरसर नाथ का प्रवचन, रतिनाथ की चाची में आमों का वर्णन, वरूण के बेटे में मछुआ जन–जाति का बलचनमा में नायक का अपनी भोली बातों से कहीं भैंस चराने उसे काटने वाली कीड़ों के नाम बताने आदि ऐसे ही स्थल है।

नागार्जुन के ग्यारह उपन्यासों में से नौ उपन्यासों का परिवेश पूर्णतः ग्रामीण है। उनके पात्र उन पात्रों की संवेदना, उनका सुख, दुख, उनकी रहन–सहन, उनकी भाषा आदि सब में भारत के ग्रामीण जीवन की सोंधी गंध आती है। इतनी अधिक मात्रा में ग्रामीण जीवन पर उपन्यास लिखने पर भी हर उपन्यास की कथावस्तु और संवेदना अलग है। कहीं भी ऐसा नहीं लगता कि उपन्यासकार कथा दोहरा रहे हैं। इसी से नागार्जुन के ग्राम जीवन का गहरा लगाव, दीर्घ परिचय और अटुट प्रतिबद्धता दिखाई देती है।

निष्कर्ष

अतः स्पष्ट है कि नागार्जुन अपने उपन्यासों में मिथिला जनपद के ग्रामीण रूप का यथार्थवादी चित्रण करते है। औचित्यि परिवेश को दिखाना उनका ध्येय नहीं है। उनका उद्देश्य मुख्य रूप से मिथिला अंचल के अन्धविश्वास और रूढ़ियों आदि ग्रामीण जीवन के बाहरी रूपों–पक्षों के साथ–साथ सामाजिक अन्तर्विराधों को स्पष्ट

रूप से दिखाते है। ग्रामीण जन जीवन की सच्चाइयों को व्यापकता और गहराई से यथार्थवादी दृष्टिकोण से अभिव्यंजित करते है। संपेक्ष में यहीं कहा जा सकता है कि नागार्जुन ने भारतीय ग्रामीण समाज के अन्तर्विरोधो को सामाजिक–आर्थिक समस्याओं को साम्राज्यवादी शक्तियों, समाज प्रतिगामी और यथार्थवादी शक्तियों को पहचाना है और श्रमजीवी किसान–मजदूर में अपनी दृढ़ आस्था और विश्वास व्यस्त करते हुए क्रांति कारी शक्यिों में समाजवादी व्यवस्था की स्थापना की संकल्पना की है। उनकी दृष्टि मूलतः समाजवादी यथार्थवादी रहीं है।

सदंर्भ ग्रंथ सूची

1. *डॉ. दयानिधि सा, गोपीनाथ महान्ती और नागार्जुन के उपन्यासों में ग्राम्य चेतना प्रकाशक, विकास प्रकाशन कानपुर, संस्करण प्रथम 2014 ई०, पृष्ठ क्रमांक 77,78*
2. *डॉ. सी.मेंढ़े यादव, नागार्जुन के उपन्यासों का तात्विक मूल्यांकन, प्रथम संस्करण प्रकाशन वर्ष 2011, पृष्ठ क्रमांक178*
3. *डॉ. दयानिधि सा, पृष्ठ क्रमांक 80,81*
4. *डॉ. सी.मेंढ़े यादव, पृष्ठ क्रमांक 179*
5. *डॉ. ए. परमार रलावा, नागार्जुन के उपन्यासों में ग्राम्य जीवन एक परिशीलन, प्रकाशन के एस. पब्लिकेशन भोपाल, प्रथम संस्करण 2012 पृष्ठ क्रमांक 164,165,166*
6. *डॉ. गोविन्द बुरसे, नागार्जुन के उपन्यासों में प्रगतिशील चिन्तन, विकास प्रकाशन कानपुर, प्रथम संस्करण 2015 ई०, पृष्ठ क्रमांक 91*